ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ।।

❋ मनुष्य बनो ❋

१९८३

वर्ष ३३	फाल्गुन संवत २०३९ वि०	सं० ५

शब्द

मैं अपने मन से हार गई ।। टेक ।।
मेरा मन नहीं बस में मेरे, नित उत्पात मचावे ।
क्रोध की आग चित्त में भड़के, तन मन सकल जरावे ।। हार गई
मेरी जिभ्या बस नहीं मेरे, बोले अनुचित बानी ।
लाभ किसी का उससे क्या हो, मेरी करती हानी ।। हार गई
मेरी आँख न बस में मेरे, अवगुन देखनहारी ।
गुन की ओर दृष्टि नहीं जावे, दोष दृष्टि की मारी ।। हार गई
कान मेरे बस में नहीं मेरे, परनिंदा अनुरागी ।
सुनें और की दोष कहानी, प्रेम भजन को त्यागी ।। हार गई
सतसंगत के बचन कौन सुने, आलस नींद सतावे ।
राधास्वामी ऐसी दशा से, तुम बिन कौन बचावे ।। हार गई

तत्त्व दर्शी से :—

मनुजी महाराज

जो मनुष्य हिन्दुओं को विशेषता को जानने का अभिलाषी हो उसको चाहिए कि मनु मन्वन्तर और मनुधर्मशास्त्र पर विचार करे। उससे उसकी समझ में आजायगा कि हिन्दुओं की इस संसार में क्या स्थिति है और किस कारण से वह अब तक इस संसार में दृढ़ता के साथ पांव जमाए हुए खड़े हैं ॥

संसार में कितनी मनुष्य जातियां उत्पन्न हुईं, और मर मिटीं, कितने राजाओं की उन्नति की ध्वजाऐं आकाश में लहराई और फिर सदा के लिए गिर गई। कितनी जातियों ने असभ्यता की दशा से निकल सभ्यावस्था को धारण कर लिया कितनी सभ्य जातियां निम्नावस्था को पहुंच गईं कितनी ही जातियां मर खप गईं परन्तु हिन्दू जाति अब तक जीवित है। जिस समय किसी देश के खंडरातों में मनुष्यों और पशुओं की हडिडयों के ढ़ाचे, उनके औजार और हथियार, उनके खान पान के भांडे प्राप्त होते हैं तो लोगों को आश्चर्य होता है कि यह किस प्रकार के प्रबल मनुष्य रहे होंगे परन्तु उनको कथा कहानियों तक का पता नहीं, वह पानी के बुलबुलों की तरह ससार में आए और फिर अलोप हो गए कोई उनका नाम तक नहीं जानता। उनकी जाति में एक भी ऐसा मनुष्य नहीं दिखाई देता जो बीती हुई दशा का वृत्तान्त वर्णन कर सके ॥

संसार विस्थित है। आज कल की सभ्य जातियों के हृदय में भी रह २ कर यह प्रश्न चुटकियां लेता है, कि हम भी एक दिन इसी प्रकार अलोप हो जायेंगे और कोई हमारा नाम लेने वाला तक बाकी न रहेगा। प्राचीन जातियों का तो कहना ही क्या है। और दो चार हजार वर्षों की जातियों के इतिहास तो और भी हृदय को कम्पित करने वाले हैं। आज वह मिश्री जाति कहां है जो संसार में अपना डङ्का बजाती थी? आज पारसी जाति का क्या हाल है? जिसके नाम से बड़े २ शूरमा देशाधिपति डरते थे। आज यूनियों की विद्या बुद्धि का सूर्य्य कहां है? जिसने संम्पूर्ण जगत में अपना

सिक्का बिठा दिया था, कालबली के चक्र ने उन सब को थोड़ी ही देर में पानी के बुदबुदे की तरह बैठा दिया। वह सब मर मिटे। अब कोई उनके नाम तक भी नहीं जानता। यह हाल केवल जातियों का ही नहीं वरन् उनके धर्म मतों की भी यही दशा है, किन्तु इसके विपरीत लाखों करोड़ों वर्ष बीते हिन्दु जाति अब तक जीवित है। उसका असली स्थान हिमालय शिखर अब तक उसी प्रकार खड़ा है और समय के नष्ट करने वाले हाथों को ललकार रहा है। उसका पग अर्थात् वेदिक धर्म इतना प्राचीन होने पर भी नवीन से नवीन तरुण मत के साथ दो २ हाथ करने को तैयार है। परन्तु सत्य यह है कि संसार के किसी मत को साहस नहीं रहा कि उसके सामने खडे होकर अपना मुख खोल सके। अभी कल की बात है कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने वेदिक धर्म का झण्डा हाथ में लेकर अन्य धर्ममत वालो को ललकारा कि "आओ जिस किसी में साहस हो वेदिक धर्ममत की सचाई के सन्मुख अपने धर्म मत की विशेषता दिखलाओ" ॥

तो संपूर्ण विरोधी धर्ममतावलम्बियों की मण्डलियों में खलबली मच गई। और न केवल आर्य्यवर्त में ही ऐसा हुआ वरन् संपूर्ण भूमण्डल के धर्ममतों में तहलका मच गया। Root Roll और मनु सदैव Root Race ही में उत्पन्न हुआ करते हैं। प्रथम इसके हम मनु के कुछ हालात आप को सुनावें उसकी थोड़ी सी व्याख्या कर देना उचित समझते हैं। संसार में देखा जाता है कि सभ्य जातियां प्रायः असभ्य और जङ्गली जातियों की झपट में आजाया करती हैं। यह कुछ स्वाभाविक बात ज्ञात होती है। एक जाति है जो असभ्तया की अवस्था से थोड़ी ऊँची हुई है। उसमें शारीरिक बल अधिक है इसलिए अपने से अधिक सभ्य जाति पर छापा मार कर उसे जीत लेती है। परन्तु जब वह अपनी बारी पर सभ्य और सुशील बन जाती है तो दूसरी असभ्य जाति आकर उनको दबा देती है। जिस जाति में हम [illegible]
हुए लिख रहे हैं, वह कभी बहुत प्रचण्ड और प्रबल जा[illegible]
बनने और बिगड़ने का यही कारण है जो हमने ऊपर वर्ण[illegible]
ओं की विशेषता निराली है। उनमें मानुषी सभ्यता का [illegible]

है जो चमकता हुआ दिखाई न दे। भारतवर्ष स्वतः सम्पूर्ण भूमण्डल का लघुचित्र है। इसमें संपूर्ण जगत का दृश्य वर्तमान है। यह गुण केवल आर्य्यों मे होता है। हिन्दुओं की दीर्घायुता का बहुत बड़ा कारण यही है। और प्रकृति की ओर से इसको प्राप्त हुआ है इस लिए इसको कोई इससे छीन नहीं सकता। व्याख्या बहुत सविस्तार हो गई परन्तु पर हमको इसकी परवाह नहीं। हमारा कर्त्तव्य असल उद्देश्य को प्रगट करना है। इसलिये हम क्षमा किये जाने के योग्य हैं। अब हम इस मन्वन्तर के मनु के कुछ हालात आपको आपको सुनाते हैं ताकि पता लग जाय कि आपकी जाति की क्या विशेषता है ।।

प्राचीन ग्रन्थों के पाठ करने से ज्ञाता होता है, कि जब धरती इस योग्य नहीं रहती कि उसमें जीवधारी निवास कर सकें तो वह जलके आकार में परिवर्तित होने लगती है। भूमि वास्तव में बनी भी जल ही से है। और इस लिए अन्तिम समय पर उसका अपने मूल कारण की ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक बात है। उस समय पृथ्वी का लोप होकर चारों ओर पानी ही पानी हो जाता है और जीव धारी नष्ट हो जाते हैं। उस आपत काल में जो मनुष्य बच रहता है उसको मनु कहते हैं। और उसी के द्वारा फिर नए सिरे से मानुषी सृष्टि की उत्पत्ति होती है ।।

पौराणों का कथन है कि प्रारम्भ में जो पहला मनुष्य जगत में उत्पन्न हुआ था वह भी मनु था, और उसका नाम स्वयम्भू मनुष्य बताया जाता है। उसके पश्चात् दूसरा मनु आया, फिर तीसरा आया इत्यादि। इस समय तक छः मनु बीत चुके हैं। जिनके नाम यह हैं। स्वायम्भू, स्वारोचष, उदत्यम्, नामस, रेवत, चाक्षतश, दो मनुष्यों के बीच में जो काल बीतता है, वह मन्वन्तर कहलाता है। और वह ब्रह्मा का एक दिन है पौराणों में उसकी संख्या ३०८४८८००० वर्ष बताई गई है। एक कल्प में चौदह मनु होते हैं। यह बारह कल्प है इस मन्वन्तर के मनु का नाम वैवस्वत है। उसको सूर्य भी कहते हैं। उसके पुत्रों में से एक का नाम अक्षाकु था उसकी जो सन्तान हुई उसको सूर्यवंशी क्षत्रिय कहते हैं। इस वैवस्वत मनु का तीसरा नाम रेवत श्राद्धदेव अथवा सत्यव्रत भी है। इसकी स्त्री का नाम श्रद्धा था। कहते है कि

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जब इस मनु को राज करते हुए बहुत दिन बीत गए तो उसको ईश्वर की ओर से आकाशवाणी हुई कि आज से सातवें दिन सारी पृथिबी जल से भर जायगी, मनु बड़ा साहसी पुरुष था, उसने बड़ी भारी नौका तैयार कराई और अपने सम्बन्धियों तथा सप्तऋषियों को उसमें बैठा लिया, और आवश्यक आहारादि भी, रख लिया। जब पानी बढ़ने लगा तो यह सब उसी पर बैठ गए। सारा जगत जलमय हो गया। मनु की नौका सुमेरु पर्वत की चोटी पर जा ठहरी जो हिमालय का सबसे ऊँचा भाग है। और जो आर्य जाति का असली स्थान पश्चिमी तत्ववेता इसको मध्य एशिया का कोई भाग नियत करते हैं वा[illegible]ों की सम्मति यह तातार देश "काफ" नामक पर्वत है। और उसकी चोटी का नाम अरारट है। परन्तु यह कई युक्तियों के विचार से मिथ्या प्रतीत होता है। क्योंकि प्रथम तो वह संसार में सबसे ऊंचा स्थान नहीं है। दूसरे महाभारतदि ग्रन्थों में सुमेरु पर्वत हिमालय को बताया गया है। प्राचीन आर्य पंडित आर्यों का असली स्थान तिब्बत बताते हैं॥

वैवस्वतमनु इस कल्प का सातवाँ मनु है और यह सातवां मन्वन्तर है। इसके कई पुत्र बताये जाते हैं। जब पानी कम हुआ तो उसकी सन्तान पृथिवी के विविध बिभागों में फैलने लगी। सुमेरु पर्वत के उस पार का अपने पुत्रों नृग, श्र्याति वृष्ट, कुरुशक, नरशन्त, पृष्टघन, नभग, को प्रदान किया, अक्षाकू उसका बड़ा पुत्र था, उसको भारतवर्ष के अवध प्रान्त में राज्य करने की आज्ञा दी। और उसने अयोध्या नगर की बुनियाद डाली। जिस प्रकार सुमेरु पर्वत सम्पूर्ण भूमि की चोटी है। वैसे ही अयोध्या और उसके इर्द गिर्द की भूमि पृथिवी का केन्द्र है। इस मनु की एक पुत्री का नाम ईला था, उसका विवाह चन्द्र के पुत्र बुध के साथ हुआ था। उसके जो महा तेजस्वी पुत्र हुआ था उसका नाम पुरुरबा था। उसकी राजधानी प्रतिष्ठान पुर में थी। जो अब भूंसी के नाम से प्रसिद्ध है। और प्रयाग में पूर्वो गंगा के तट पर अपने मीलों में फैले हुए खण्डरात के द्वारा अपनी प्राचीनता को स्मरण कराती है। यह पुरुरवा क्षत्रियों के उस कुल का मुखिया है जो चन्द्र वंशी कहलाते हैं। और जिन के वृत्तान्त महाभारत में अंकित हैं। युधिष्ठिर इस कुल का दीपक था॥

मनु के विषय में कहा जाता है कि वह चक्रवर्ती राजा था और उस समय कितने टापू पानी में निकल आए थे ।ब पर उसका राज्य था । क्योंकि मनु सदैव सार्व भूमि हुआ करते हैं । इस के मन्त्री सप्तऋषि थे । जिनके नाम यह थे:—कश्यप, अचेय, वशिष्ट, विश्वामित्र, गौतम, भारद्वाज, जमदग्नि और इन्हीं के द्वारा मानुषी सृष्टि की बृद्धि हुई है ।।

मनु और उसके विहान मन्त्री सब के सब धर्मात्मा थे । और उनकी जो सन्तान उत्पन्न हुई थी वह भी सबकी सब धर्मात्मा थी । और धर्म, अर्थ काम मोक्ष के लिये वेदों की आज्ञा पर चलते थे । प्रत्येक दैनिक संध्या और हवन किया करता था, यज्ञादि में जाति के सम्पूर्ण मनुष्य एकत्र होकर धार्मिक प्रेम तथा प्रीति का परिचय देते थे । पौराण कहते हैं कि उनमें सब प्रकार की विद्या और कला कौशल का रिवाज था, तत्त्व ज्ञान, धनुर्विद्या. खगोल, भूगोल, भूसच, पदार्थ विज्ञान, रसायन, कृषिकर्म, वैद्यक, विमान, अग्निरथ, सञ्जीवनी विद्या, परकाया प्रवेश, गान, वाद्य, नृत्य, वचन, सिहि, अस्त्र, शस्त्रादि विद्याओं का धीरे २ बहुत प्रचार हुआ, इनसे साफ प्रगट होता है कि किसी काल में आर्य्यवर्त उन्नति के शिखर पर पहुँचा हुआ था । परन्तु काल चक्र की विलक्षणता कि आर्य्य जाति इन विद्याओं से रहित हो गई । बाजी विद्यायें यथा परकाया प्रवेश अर्थात् दूसरे के शरीर में अपना जीव ले जाना ऐसी अलोप हुई है कि किसी को उसका नाम तक स्मरण नहीं हैं । क्योंकि संसार स्थूल का विश्वासी है । सूक्ष्म पर किसी का विश्वास नहीं होता । कर्मा धर्मा व्यर्थ माने जाते हैं । जो लोग कुछ थोड़ा बहुत करते हैं वह भी पूरा २ विश्वास नही रखते ।।

मनु के न्याय और धर्म का संसार में सब जगह डङ्का बजता था । वह प्रजा का पिता और पालन करने वाला था । और जब राजा स्वयम धार्मिक तथा नीतिवान हो तो यह आवश्यक बात है कि उसकी प्रजा भी वैसी ही हो । मनु अपने समय का न केवल राजा था वरन् वह धर्म गुरु भी था । और ब्रह्म-ज्ञान की विद्या हृदय प्रति हृदय उसी के समय से क्षत्रियों में चली आई थी । जिसका कुछ २ पता उपनिषदों की गाथाओं और स्वामी शंकराचार्य के वर्णन

से मिलता है ॥

मनु स्वयंत धर्म शास्त्र का सजीव रूप था। परन्तु आगामी राज्यस्थिर रखने के लिये उसने राजनीति की बुनियाद डाली। उसका बनाया हुआ मानव धर्म शास्त्र संसार में अद्वितीय ग्रंथ है। कौनसा विषय है जो उस पुस्तक में नहीं है शोक यह है कि उसमें कहीं २ बुरी मिलावट भी कर दी गई है अन्यथा वह ऐसा अद्वितीय उत्तम धर्म ग्रथ है कि संसार के पुस्तकालयों में सब से मुख्य समझे जाने के योग्य है। वेदों के पश्चात् स्मृति का मान होता है, वह ईश्वरीय हैं, यह मनुष्य कृत हैं और इसमें संदेह नहीं कि समय के जानने वाले ऋषियों ने पीछे से भी कई स्मृतियां रचीं, याज्ञवल्क्य स्मृति, नारदस्मृति, पराशरस्मृति इत्यादि परन्तु किसी को मनुस्मृति को हटाने का साहत नहीं हुआ। वह अब भी माननीय समझी जाती है। मनुस्मृति में हिन्दू धर्म का सब का वर्णन है। किसी बात को भी उसमें छोड़ा नहीं गया। जाति के विषय में जिन २ बातों के जानने की आवश्यकता है। वह सब अंकित हैं किसी एक बात को छोड़ा नहीं गया। जिस जगह मनु स्त्रियों के अस्दत्व के विषय में लिखता है। वह शब्द बहुत आदरणीय हैं। श्री मनुजी महाराज का वचन है कि "जहाँ स्त्रियाँ रोतीं हैं या दुःख पाती हैं वह गृह शीघ्र नाश हो जाता है। पति, श्वशुर और अन्य सम्बन्धियों को चाहिये कि वस्त्र, भूषण, फल, फूल, से स्त्रियों की प्रसन्न करते रहें स्त्रियों का अस्तित्व पुरुषों से किसी दशा में भी कम नहीं था। मनुजी के कथानुसार कोई यज्ञ पूरा नहीं होता जब तक अर्धाङ्गी स्त्री साथ न हो, मनुजी स्त्री को लक्ष्मी रूप, देवी रूप, सरस्वती रूप बताते हैं उसी के आनन्द से आर्शीवाद प्राप्त हो सकता है। क्योंकि वह गृहणी और घर की रानी है। परन्तु आज कल हिन्दूओं में स्त्री की जो स्थिति है वह अकथनीय है। उनका घर में कुछ भी सम्मान नहीं किया जाता है, और यही कारण है कि हिन्दुओं में खराबी आ गई है ॥

मनुजी ने कितने दिनों तक राज्य किया, यह बहुत विचार ने योग्य है। हम केवल इतना ही कहेंगे कि अन्त में उन्होंने वन में जाकर तप और योगाभ्यास करते हुए संसार को त्याग दिया। और अपने पीछे अमर कीर्ति छोड़

गए। ऐसा कौन हिन्दू मनुष्य होगा जो श्री मनुजी के पवित्र नाम से अनजान हो। संसार की समस्त जातियां आर्य्य जाति से निकली हैं इसलिए वह भी किसी न किसी प्रकार से अपनी कथा कहानियों में मनु को सबसे पहिला नियम रचियता स्वीकार करते हैं। मिश्र वासी इसको मेनो और यूनानी मेनस कहते हैं। इस शब्द से ज्ञात होता है कि यह सब 'मनु,' शब्द के अपभ्रंश हैं॥

शब्द

जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा।
उसका हुआ भव सागर से बेड़ा पारा॥
नहीं साँचे भक्त किसी से कभी हैं डरते।
नहीं भय से काल करम के हैं वह मरते।
गुरु उनकी पल पल में है रक्षा करते।
वह सहज में जग निधि से तरते।
गुरु की कृपा से हुआ उनका निस्तारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा॥२॥
नहीं धरम करम से लगा किसी का ठिकाना।
नहीं संजय नियम में परमारथ का निशाना।
सब वृथा जानो ज्ञान ध्यान अनुमाना।
केवल सतगुरु की दया में है निरवाना।
गुरु भक्त से होगा आप ही भला तुम्हारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया केहारा॥२॥
मीरा गणिका रैदास और सदन कसाई।
इन सबको गुरु की भक्ति हुई सुखदाई।
तर गया गुरु की भक्ति से पीपा नाई।
गुरु रात दिनस अपने भक्तों के सहाई॥
सब त्याग मोह भ्रमजाल किया भक्ति से गुजारा।
जिसने निश्चय से गुरु का लिया सहारा॥४॥

हम ऊपर बता चुके हैं कि अब तक छः मनु बीत चुके हैं। यह सातवां मन्वन्तर है। इसमें यह समझना चाहिये कि इस कल्प में अब तक मनुष्य का सात पीढ़ियों का आविर्भाव हुआ है। थियासूफी वाले इसका उपकथन अनेक अलंकारों में करते हैं वह इस बात को भूल गये हैं कि संपूर्ण जातियों की उत्पत्ति प्रारम्भ में हिन्दू जाति में हुई, क्योंकि यही सबसे प्राचीन जाति है और इसी में मनु उत्पन्न हुआ करते हैं ॥

हिन्दुओं को चाहिये कि इन किच्चित पृष्ठों को विचार पूर्वक पढ़ें और अपने भाइयों को ढारस दें कि बीज कभी पृथिवी से नष्ट नहीं हो सकता। जब तक पृथिवी बनी है, जब तक हिमालय पर्वत खड़ा है। गंगा यमुना में अमृत बहता है। जब तक वेदों की मर्य्यादा स्थिर है, जब मनु इस जाति में उत्पन्न होते रहेंगे, तब तक हिन्दू जीते रहेंगे, उनको कोई मार नहीं सकता, न वह नष्ट हो सकते हैं ॥

आत्मा की अविनाशिता पर विश्वास रखने वाली ! इन बातों पर विचार करो, शोक और भय के विचारों को पास न आने दो। निश्चय रखो तुम कभी न मरोगे। इस संसार में तुम्हारी विशेष प्रकार की स्थिति है। तुम्हारा जीवन कुछ उद्देश्य रखता है। संसार का जो कार्य तुम्हें सौंपा गया है वह और किसी से पूर्ण नहीं हो सकता एतदर्थ तुम जीवित रहोगे ! जीवित रहोगे !! जीवित रहोगे !!! इसमें किंचित मात्र भी सन्देह नहीं है। समय के उत्पात से मत डरो, यह आते जाते रहते हैं। अपनी विशेषता पर स्थिर रहो, तुम फिर भी संसार को अपनी महानता का दृश्य दिखा सकोगे। हमारा काम अत्याचार वा रक्तपात करना नहीं है। हम शान्ति की शिक्षा देने के लिये उत्पन्न हुये हैं। हम जगत् के गुरु थे, गुरु हैं और आगामी भी होंगे। यह हमारा अस्तित्व कोई हम से छीन नहीं सकता। ईश्वर तुम सब को शान्ति दे ॥

सत्संग

मरमसन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियार पुर २५-१२-८२

तारने वाले ने तारा, तर गये सब तर गये।
जिसको तरना था तरे, भवनिधि के वह तट पर गये ।।
लालची कामी तरे, क्रोधी तरे, मोही तरे।
नीची योनी में जी थे, वह नाम ले ऊपर गये ।।
तारने वाले ने तारा, तार तरने का बंधा।
अब हो क्या चिंता किसी को, उसके जो दर पर गये ।।
आये शरनागत जो उसके, कर लिया जीवन सुफल।
अब नहीं तरने में संशय, काम अपना कर गये ।।
राधास्वामी ने दया की, लाये नौका शब्द की।
जो चढ़े वह तर चले, चूके जो वह सब मर गये ।।

राधास्वामी।

गुरुब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुदेवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नमः ।।
ध्यान मूलारो गुरु मूर्तिः पूजा मूलं गुरोः पदम्।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यम्, तस्मै श्री गुरवे नमः ।।

मेरी अपनी ही आत्मा के साक्षात् स्वरूप प्यारे सत्संगी भाइयों और बहनो। आज महाराज जी के टेपरिकार्ड किये हुये सत्संग के वचनों में जो सुने गये उनमें नाम की बात, ध्यान की बात और गुरु की बात हो रही थी। ध्यान मूलं गुरु मूर्ति ! सुमिरन, ध्यान और भजन। सुमिरन नाम का ध्यान गुरु का भजन, उस परम तत्व का या वह आवाज, वह शब्द जिसे शब्द ब्रह्म भी कहा है, जो प्रकाश का आधार है उसका प्रकाश को गुरु के चरण कहा जाता है, प्रकाश से ही सारी सृष्टि, चर-अचर अर्थात् वह सृष्टि जो नाश्वान् है और वह सृष्टि जिसका नाश नहीं होता (वह भी सृष्टि है) यह दोनों प्रकाश

से बनती हैं प्रकाश को इसलिए चरण कहा गया है । पाँच तत्व और मन, बुद्धि अहंकार यह आठ नाशवान् प्रकृति मानी जाती है । इसको अपरा प्रकृति कहते हैं :—

भूमि, आपो, अनलो, वायु, स्वं, मनो बुद्धि देवच ।

यह आठ हैं, इसको अपरा प्रकृति या नाश होने वाली प्रकृति कहा गया है ।

दूसरी प्रकृति है परा प्रकृति :—

'जीव भूतां जन्म धारयते एवं जगत् !

वह आत्मिक जीवों की शृष्टि है, जो हम हैं, जो विन्दू हैं सिन्धु से, उस को परा प्रकृति कहा है, उसका नाश नहीं है, जिसके आधार पर यह सारा चलायमान जगत् चल रहा है । खंग अर्थात यह आकाश जो हमें दिखाई देता है यह सारे जगत् के अन्दर जो कुछ भी घटित होता है इस आकाश के अन्दर अंकित होता जाता है, आकाश तत्व है जैसे पृथ्वी तत्व है। पृथ्वी तत्व शरीर में प्रधान होता है लेकिन पृथ्वी के साथ-साथ जल तत्व भी है वल्कि हमारे शरीर के अन्दर जल ज्यादा है और उसके साथ वायु तत्व है । इन पाँचों के गुण हैं । पृथ्वी का गुण है अच्छी या बुरी गन्ध देना । जो पृथ्वी के कण होते हैं उन्हीं से गन्ध होती है, इसलिए पाँच तत्व से सम्बन्धित पांच ज्ञान इन्द्रियाँ है । नासिका जो है वह पृथ्वी की ज्ञान इन्द्री है । आपो, पानी जो है, पानी का गुण है आपको रस देना, saliva मुंह के अन्दर आता है तब रस मिलता है । पानी की ज्ञान इन्द्री जो है वह हमारी जबान है । अनिलो, अनिल कहते हैं वायु को । वायु, हवा, जो चलती है उसका क्या गुण होता है ? स्पृशवान् वायु । हमें स्पृश, Touch जो हम छूते हैं, छूने का जो असर होता है वह वायु के कारण मालूम होता है । और इसी तरह से अग्नि. अग्नि का काम है ज्योति । ज्योति से हम देखते हैं, नेत्र का उसका सम्बन्ध है । पांचवीं है खंग, आकाश । आकाश क्या है ? आकाश के अन्दर ईथर के गुण है । ईथर का क्या गुण है ? शब्द । जो शब्द हम सुनते हैं यह शब्द स्थूल शब्द होता है और [illegible] शब्द आकाश का गुण है । रेडियो और टैलीविजन जो हैं यह

हैं कि शब्द की किरणें हैं जो आप short waves, long waves, छोटी लहरें और बड़ी लहरें रेडियो के अन्दर सुनते हैं, अब देखो ! यह चीजें जो हैं यह आजकल के आधुनिक युग का विज्ञान है । एक बात बताना चाहता हूं कि चन्द दिन हुए मैं गलती से एक movie देखने चला गया परन्तु कभी गलती भी ठीक होती है - मैं जयपुर गया था, वहाँ एक नया सिनेमा घर बना है । कहते हैं कि एशिया में यह सबसे सुन्दर और बड़ा अच्छा भवन है राज मन्दिर उसका नाम है । उसके जो मालिक हैं वह कहने लगे कि आप जाके जरूर देखो, बहुत सुन्दर है । भौतिक दृष्टि से ठीक है, मैं गया और कई सालों के बाद वहाँ एक picture देखी लेकिन उसके देखने से गलती नहीं हुई बल्कि मैंने यह अनुभव किया कि जो काम, जो हानि, जो हमारी संस्कृति की जड़ को काटने का प्रयास, दो सौ साल में अंग्रेज नहीं कर सके वह पैंतीस साल के आने राज्य ने पूरा कर दिया । अगर यह सिनेमा, जैसे कि चल रहे हैं चलते रहे, तो हमारी संस्कृति का नाश हो जायगा हालांकि यह लार्ड मकाले नहीं कर सका । मकाले एक वायसराय था, उसने अपने Secretary of state को इंग्लैंड के अन्दर एक चिट्ठी लिखी थी, जिसमें उसने कहा था कि मैं इन भारत वालों को अंग्रेजी की शिक्षा दे करके इनकी संस्कृति की जड़ काट दूंगा । वह तो नहीं काट सके परन्तु हम काट रहे हैं ।

पत्रकार महोदय ! यह क्या हो रहा है सिनेमाओं के अन्दर !! कमाल हो हो गया ! मैं तो पाँच साल के बाद में आया, सिनेमा के अन्दर कोई हमारी सभ्यता की बात नहीं बल्कि हमारी सभ्यता को काटने की बातें हैं । नकल, और इतनी गन्दी नकल !, सच्चाई की नकल नहीं है । पापा और मम्मी के साथ बात नहीं होती !, अपनी भाषा ही जैसे हमारी न हो । महात्मा गांधी ने एक दफे कहा था कि उसके घर से अंग्रेजी भाषा में कोई चिट्ठी आती है तो उसके एक अंग्रेज दोस्त ने कहा था कि तुम्हारी कोई भाषा ही नहीं जो अंग्रेजी भाषा में चिट्ठी आती है । हम अंग्रेजी बोलने के बहुत शौकीन और अंग्रेजी बोलने वाले समझते हैं कि हम सबसे ऊंचे हैं जबकि सच्चाई यह है फ्रांस, छब्बीस मील का फर्क है, सिर्फ छब्बीस मील, आप

फ्राँस चले जाइये, छब्बीस मील के बाद एक शब्द अंग्रेजी का नहीं सुनोगे आप। जानते हैं फ्राँस वाले अंग्रेजी, लेकिन वे अंग्रेजी बोलते नहीं हैं ! कि हमारी संस्कृति नहीं है अंग्रेजी भाषा। क्या चीन अंग्रेजी भाषा पढ़ता है ? क्या रूस ने अंग्रेजी भाषा पढ़ के तरक्की की ? नकल और बड़ी बुरी नकल हो रही है !, असल तो है नहीं !!

तो यह जो हमारी संस्कृति की दुर्गति हो गई है और हम खुद अपनी ही संस्कृति को जानते नहीं हैं और उनका अन्धाधुन्ध अनुकरण कर रहे हैं, यह बात मैंने सिनेमा के अन्दर देखी तो बहुत दुःख हुआ !

और फिर मैंने दिल्ली में एक magzine (रसाला) देखा, उसमें अमेरिका के किसी मिशन, कोई संस्था है, उन्होंने मद्रास के आसपास कहीं पर स्कूल खोला है वहाँ कमजोर और लूले, लगड़े बच्चों को, रखा जाता है और उनको पाला जाता है (यह काम अच्छा है) लेकिन उसके पीछे उनका उद्देश्य क्या है ? उस स्कूल व संस्था का नाम रखा है उन्होंने Christian dale और वह पनप रहे हैं, पैसे भी यहाँ से ले रहे हैं। जब मैंने वहाँ पर उस के संचालक का नाम पढ़ा तो मुझे बहुत दुःख हुआ इस बात का कि वह जो संचालक है वह अमेरिका का एक बड़ा माना हुआ राजनीतिज्ञ है। तो मैं यह देख रहा हूँ कि हमारे लिए धर्म तो सब बराबर हैं, आप धर्म सिखायें किन्तु शिक्षायें सिखायें जबकि वहखुद तो अपने धर्म पर चल नहीं रहे !

अब आज ईसा मसीह (जैसिस क्राईस्ट) का दिन है, मैं उस पर भी कुछ कहना चाहता था। जैसिस क्राईस्ट ने क्या किया ? क्या सीखा ? कहाँ से सीखा ? इस बात पर रोशनी नहीं डाली जाती। जैसिस क्राईस्ट का जन्म एक ऐसी जाति में हुआ जिस जाति के असीन लोग, जिसको हम उदासीन कहते हैं, असीन लोग पुनर्जन्म को मानते थे और वह यह भी मानते थे कि जैसे गीता में लिखा है कि जब धर्म की हानि होती है तो अवतार होता है. वह अपने इसराईल के अन्दर उस अवतार की प्रतीक्षा कर रहे थे। और मैरी उस जाति की एक कन्या थी, कन्या को पूजते हैं, उसको तैयार किया गया कि उसके अन्दर एक पवित्र आत्मा आकर के जन्म लेगी। और जब उसने

जन्म लिया तो उस वक्त (आज के दिन की बात है) कहते हैं कि तीन ऋषि पूर्व से गये, उन्होने जहाँ उसका जन्म हुआ था, सितारा देखा तो उन्होंने कहा कि यह एक बड़ी पवित्र आत्मा का अवतार है। जब वह सात साल या ग्यारह साल का हो गया था वही तीन ऋषि उसको पूर्व में ले गये। कहाँ ले गये ? यह लिखा नहीं है लेकिन ईसा मसीह, जैसिस क्राईस्ट का ग्यारह साल का इतिहास नहीं है जो अब मिला है जिसके हिसाब से वह उसको काश्मीर के रास्ते से उधर से निकल करके अफगानिस्तान से तिब्बत में किसी तरह निकाल के भारत में लाये और जगन्नाथ पुरी में जाकर के इस ने वेदान्त की शिक्षा ग्रहण की। फिर उसने योग सीखा और यह साधना करने के बाद वह वहाँ जाकर के उसने अहिंसा का और योग का प्रचार किया। यह बात अब निकली है।

अमेरिका में जहाँ महाराज जी भाषण देने जाया करते थे, A.R.E Association for Research and Enlightment अर्थात खोज और ज्ञान की संस्था उसका जो चलाने वाला था, Edgar Cayce। उसमें पिछले जन्मों के भृष्ट योगी होने के कारण एक क्षमता थी कि जब वह लेट जाता था तो उसको सब ज्ञान हो जाता था। मैं बता रहा था कि आकाश जो भी घटित हुआ है वह आकाश में अंकित है, उसको उसका ज्ञान हो जाता था और इसलिए वह बहुत लोगों के बल्कि सब लोगों के पिछले जन्म बता देता था और उस जन्म की घटनाओं की जाकर के फिर उस की जाँच होती थी, हजारों ऐसे Cases हैं। उसने कहा है (मैं नहीं कह रहा !) कि बाईबल के अन्दर यह सच्चाई नहीं लिखी है लेकिन जैसिस क्राईस्ट भारत में गया ! उसने वहाँ पर योग सीखा यह बात लिखी नहीं है लेकिन उसने उसकी किताबों में यह सब लिखा है, वह भृष्ट योगी था। Edgar Cayce ही पुनर्जन्म और कर्म सिद्धान्त को इस वक्त सब पश्चिम के अन्दर ने फैला दिया। सन् १९४५ में उसकी मृत्यु हुई थी। उसने यह भी कहा है कि जैसिस उसके बहुत जन्म हुए है और उसने कहा है कि क्राईस्ट पुनर्जन्म को मानता था। उसने कहा है कि इसाईयों की एक किताब है, बाईवल के अन्दर, एक्ट वन, एक्ट टू उनकी

किताबें हैं, एक तीसरी है एक्ट थी, वह नहीं मिलती उसने कहा उसके अन्दर जैसिस क्राईस्ट ने अपनी मां से कहा है कि उसके कितने पिछले जन्म हुए थे और उसकी मां के कितने पिछले जन्म हुए थे। तो यह सच्चाई है लेकिन आज जिस तरह से और जिस गलत रास्ते से हमारी संस्कृति का प्रचार किया जा रहा है यह दुख की बात है हालांकि दाता दयाल महर्षि शिव व्रत लाल जी महाराज ने इस बात को प्रमाणित किया है कि जितनी भी संस्कृतियाँ हैं, जितने भी धर्म है वह केवल एक सनातन धर्म से निकले हैं। दाता दयाल ने एक "किताब दुनिया असल और नसल की नजर से हिन्दू है" नाम की भी लिखी है। तो हम जा रहे हैं runing efter the sahdow अर्थात हम छाया के पीछे भाग रहे हैं और असलियत को छोड़ रहे हैं, यह देखकर मुझे बड़ा दुख हुआ। इसलिए मुझे परम दयाल जी की याद आई जो उन्होंने कहा था कि ऐसी संस्था होनी चाहिए जिसमें कि कम से कम हमारे जो भारतीय बाहर बसे हुए है उनके बच्चों को तो यहाँ की संस्कृति की शिक्षा दी जाय।

मुझे ऐसी प्रेरण हुई है कि सबसे पहले Saint Faqir Manavta Public School खोलने चाहिए। आज रात को में आ रहा था रास्ते में देखा कि Saint Josf खुला हुआ है यहाँ कहीं Saint John खुला जाता है, कहीं Saint Marry खुला जाता है तो मैं चाहता हूँ कि Saint Faqir Manavta School हों। Manavta का मतलब फिर भी हम एक तंग दृष्टि से कह रहे, या बहुत जरूरी बात है, महाराज जी की बड़ी इच्छा थी और मैं चाहता हूँ ऐसे स्कूल होने चाहिएँ, आशा है कि इससे शिक्षा फैलेगी।

आपको तो मैं यह बताना चाह रहा हूं कि जो विज्ञान आज है, हम विज्ञान की निन्दा नहीं करते, विज्ञान ने बड़ी उन्नति की है लेकिन कहाँ से उन्नति की ? आपको यह मालूम है होना चाहिये कि इस वक्त का जो विज्ञान है वह एनेस्टाईन Einsten के आधार पर है। एनेस्टाईन हमारी इस शताब्दी का सबसे बड़ा वैज्ञानिक हुआ है जो एक जर्मन यहूदी था। उस

उसने एक सिद्धान्त बताया जिसको Theory of Relatinrty कहते हैं। उसके मुताबिक सापेक्ष सब चीज अपेक्षिक है। काल और देश समय और फैलाव इसका कोई अन्त नहीं यह असल में निसबती है, इससे परे कोई और चीज़ है वही परमतत्व है। लेकिन उसने जब यह सिद्धान्त निकाला कि टाईम जो है अपने आप में कुछ नहीं है हमारे मन पर निर्भर करता है तो इस बात के आधार पर उसने विज्ञान में जो एक नई चीज़ निकाली उसके आधार पर सारा विज्ञान चल रहा है। लेकिन उसका जीवन आप पढ़ें, उसने कहा है कि मुझे यह सिद्धान्त कहाँ से मिला ? उसने जर्मनी भाषा में संस्कृत की एक पुस्तक का अनुवाद पढ़ा था जिसमें यह सिद्धान्त लिखा हुआ है और हमें संस्कृत का नाम लेते शर्म आती है। मैं आपको बता रहा था, शब्दाखे, जो शब्द है वह आकाश में प्रसारित है। अगर उस समय के एक नाटककार, (कालिदास) ने यह बात लिखी कि आकाश का गुण शब्द है, उसकी किरणें हैं तो क्या उस समय के वैज्ञानिक यह नहीं जानते थे कि इन किरणों को कैसे पकड़ा जा सकता है। तो यह जहाँ तक विज्ञान की बात जो है, केवल सनातन धर्म ही ऐसा है, हमारी संस्कृति ऐसी है कि जो जितनी भी तरक्की विज्ञान करता जाये, उसके धर्म का जो आधार है वह डगमगा नहीं सकता, बिलकुल वैज्ञानिक है। तो पांच ज्ञान इन्द्रियाँ और मन, बुद्धि और अहंकार यह सब द्रव्य हैं, यह सब माद्दा हैं। कोई धर्म ऐसा नहीं कह सकता, यह नाश्वान् हैं इनका समय होता है; यह सब चीजें समय के बाद नाश हो जाती हैं लेकिन इन सब चीजों के चलाने वाली शक्ति है जो पवित्र, शुद्ध तत्व है, जो विन्दु है, वह सारे जगत् को धारण करने वाला है वही परमतत्व ही हमारे अन्दर वही एक मात्र चेतन है जो कायम और दायम है; जब उसका ज्ञान हो जाता है तब जाकर के नाम, ध्यान और भजन के द्वारा आदमी उस अवस्था को पहुँचता है जिसको पाने के बाद फिर उसका जन्म नहीं होता। यही बात आज महाराज जी के टेप से भी आप सुन रहे थे। गुरु तारता हैं, गुरु ज्ञान देकर तारता है और उस ज्ञान को समझने के लिए पहले मन को इक्ट्ठा करने का साधन बताया जाता है। सुमिरन, ध्यान और भजन साधन है, साध्य नहीं है,

हमारा उद्देश्य नहीं है, हमारा लक्ष्य और हमारी मंजिल नहीं है, लेकिन मंजिल के रास्ते पर चलने की सीढी है ।

तारने वाले ने तारा, तर गये सब तर गये ।
जिसको तरना या तरे, भवनिधि के वह तट पर गये ॥

उस ताकत, कायम व दायम वस्तु का एक गुण हमारी सुरत है कि जिधर चाहे उधर अपने आप को लगा ले । जब सुरत शरीर में लगा जाती है तो अपने अपने आपको शरीर समझने लगती है इसलिए शरीर के सुख और दुःखों का अनुभव करने लगती है । ज्यादातर लोगों की सुरत शरीर में ही लगी रहती है । इसलिए सुख और दुःख शरीर के ज्यादा होते है । सुरत मन लग जाने से मन केन्द्र बन जाता है । पश्चिमी लोगों ने सुरत लगा दी भौतिक जगत को खोजने के लिये और उसमें प्रकाशता पर पहुँच गये आप इस बात से इन्कार नहीं कर सकते कि विज्ञान ने कितनी उन्नति की है । उन्होंने उधर लगा दी और हमारे भाईयों ने ना इधर लगाई ना उधर लगाई, उन्होंने आज कल सुरत लगा दी है अपने स्वार्थ में, धोखे बाजी में, चालाकी में और इस कारण उसके अन्दर वह नीचे से नीचे गिरते चले जा रहे हैं । उसी सुरत को लगाना है ऊपर, ऊपर लगाने के साधन हैं सुमिरन, ध्यान, भजन लेकिन उससे पहले यह जरूरी है कि मन को शुद्ध किया जाये, तरने वाले तब तरते हैं ।

भवनिधि अर्थात भव का समुद्र भव का मतलब है होना । भव क्या है ? मन के खयालात, आशायें, तरंगें, मन के संकल्प, फुरना और विचार यह सब हमारा भी है । इस बात का ज्ञान हो जाना कि शरीर मन व आत्मा भी वह तत्व नहीं हैं जहाँ अन्तिम हमें जाना है बल्कि यह सब कुछ जो है यह उसी तत्व के आधार पर है जिसके पाने के बाद शरीर मन और आत्मा अपने आप एक सार हो जाते हैं यही मतलब में भवनिधि के तट पर जाने का तरने वाले वही हैं जो गुरु की बात को सुन कर गुणते हैं ! गुरु बाक ही मन्त्र है । मन्त्र शब्द का अर्थ है प्राण जो कि हमें बचाता है, जो हमारी रक्षा करता है वह मन्त्र है । गुरु ने जो कह दिया वह आप की रक्षा करेगा, गुरु बाक को

मन्त्र मानने से ही आदमो के अन्दर धीरे २ उन्नति होती चली जाती है :—

लालची कामी तरे, क्रोधी तरे, मोही तरे ।
नीची योनी में जो थे वह नाम ले ऊपर गये ।।
तारने वाले ने तारा तर तरने का बंधा ।
अब हो क्या चिन्ता किसी को, उसके दर पर जो गये ।।

इनमें कोई शक नहीं है कि जब तक हम उसके दर पर नहीं जाते हैं, जब तकहम अपने ही जोऊम में, अपने ही प्रयास को, अपने ही बुद्धि को समझ रहे हैं कि यह हमें रास्ता दिखाने वाली है तब तक दुनिया के काम भी सीधे तरीके से नहीं होते । तार बंधने का मतलब यह है कि हम अपने घर का काम करते हुये, अपने व्यवसाय व व्यापार का काम करते हुये, यह समझे कि यह सब कुछ उसी की कृपा है और उसीका है । तार उसी के साथ बंधी हुई होगी तब आपके सारे काम सहज में हो जायेंगे । यह अवस्था सब में आ सकती है, उसके लाने, उसकी बार-बार याद दिलाने के लिए ही सतसंग की जरूरत है, हनुमान समुद्र लांघ तो गया लेकिन उसको लाद दिलाया गया अरे ! तेरे अन्दर शक्ति है तब वह राम का नाम लेकर गया । सतसंग याद दिलाने के लिये ही है । कहाँ भूले पड़ हो, खाम खाह अपनी शक्ति को समझते हो मैं कर रहा हूँ, मैं कर रहा हूँ । जो चीज हम समझते हैं मैं कर रहा हूँ वह तो होनी ही होती है । अगर कोई कहे कि मैंने इतना अनति में पैदा कर लिया, मैं प्रोफसर हो गया, मैं President हो गया, मैं यह हो गया, वह तो होना ही था लेकिन एक चीज हमारे हाथ में जो है वह यह है या तो हम उस मालिक को मानकर चले या नहीं मानकर चले । जब एक बार यह निर्णय कर लिया कि हम तो मान के चल रहे हैं, हम तो नाम ले के चलेंगे, हम तो गुरु को स्वीकार करके चलेंगे तब बाकी चीजें जो हैं वह सहज में हो जाती है, तार बंधने का मतलब यही है :—

आये शरनागत जो उसके, कर लिया जीवन सुफल ।
अब नहीं तरने में संशय, काम अपना कर गये ।।

शरनागत की अवस्था यही है । यह अवस्था एक अन्दर धारणा (atti-

tud०) है अन्दरूनी अपना एक किस्स का हमारा व्यवहार है कि अन्दर से शरनागत हो जाना और बाहर के दुनियाँ के सारे काम करना। महाराज जी ने कौन से काम है जो नहीं किये, बच्चों की शादियाँ की, कौन कहता है कि आप यह मत करो, कौन कहता है कि धन मत कमाओ, कौन कहता है कि आप पत्रकार मत बनो या राजनीति में नहीं जाओ ! यह केवल अन्दर से यह एक भेद की बात है। अन्दर से शरनागत होने बाद सभी काम हो जायेंगे किसी को कहो मत ! खुद परम-सन्त हो जाओगे :–

राधास्वामी ने दया की, लाये नोका शब्द की।
जो चढ़े वह तर चले, चूंकि जो वह सब मर गये ॥

यह बड़ा अच्छा भेद है। शब्द जो है हमारे अन्दर में है। जो शब्द को समझ गये, उसका ज्ञान जिनको हो गया वह तर गये।

शब्द

आई देश बेगानी, तू मेरी सुरत सियानी ॥ टेक ॥

माया, ने की कल्पित रचना, देख के तू भरमानी।
सार असार की गम नहीं तुझको, लीला निरख लुभानी।
मन में उपजी गलानी। आई०

दस इन्द्रिन संग भोग विलासा, ले इच्छा लपटानी।
बन्धन की पड़ी गले में फांसी, उरझ उरझानी।
नही गुत्थी सुलझानी ॥ ,,

काम क्रोध मद मोह लोभ लग, अपना रूप भुलानी।
ऐसा मित्र मिला नहीं कोई, जो सत मर्म लखानी।
हो सच्चा ज्ञानी ध्यानी ॥ ,,

धर्म कर्म की राह चली जब, अटकी पत्थर पानी।
थक थक ज्ञान विचार में आई, भरमी मान गुमानी।
समझ नहीं आई बानी ॥ ,,

ऐसी दशा देख राधास्वामी, मन में दया समानी।
सुरत शब्द का पन्थ लखाया, अब तो चेत अज्ञानी।
तत्व को ले पहचानी ॥ ,,

देवऋषि नारदजी महाराज

दोहा--मानुष सोई जानिये, जाहि विवेक विचार।
जासु विवेक विचार नहीं, सो नर ढोर गंवार ।।

महर्षि नारद जी का नाम सब ने सुन रक्खा है। हिन्दुओं का बच्चा भी इस नाम से अवगत है। कितनी ही भोंड़ी उक्तियाँ मूर्खों ने इस नाम में घड़ रक्खी है। परन्तु ऐसे मनुष्य थोड़े मिलेंगे जो उनके असल वृत्तान्त के ज्ञाता हों ।।

श्री नारद जी के वृत्तान्त पौराणों में कुछ इस प्रकार मिले जुले वर्तमान हैं, कि उनको विधि पूर्वक लिपि वद्ध करके जीवन चरित लिखना कठिन है। एक जगह उनको पद्मकल्प में बताया गया है। दूसरी जगह वाराह कल्प में कहा गया है। कहाँ ब्रह्मा जी के वंश का आदि ऋषि नाम दिया गया है मनुजी के दरबार में भी इनकी वर्तमानता का वर्णन किया गया है और राम तथा कृष्ण जी के समय में भी यह वर्तमान थे। इस लिए पौराणों के कथनानुसार कोई मनुष्य यह नहीं कह सकता कि नारद एक ही थे अथवा इस नाम के अनेक मनुष्य हो चुके हैं ।।

यह भी नहीं कहा जा सकता कि यह यूंही कल्पित नाम था क्योंकि नारद जी के विरचित ग्रन्थ वर्तमान हैं कई प्रकार की विद्याओं के अविष्कार कर्त्ता है ।।

अब प्रश्न होता है कि आखिर नारद थे, कौन ? लीजिये हम आप को जहां तक सम्भव है उनकी संक्षिप्त जीवनी सुनाने का यत्न करेंगे।

पौराण कहते हैं नारद जी दासी पुत्र थे। उनकी माता ऋषियों की सेवा में रहा करती थी। यही उसने अपने जीवन का उद्देश्य बना रक्खा था ।।

एक बार वर्षा ऋतु के दिनों में जब आकाश की खिड़कियाँ खुली हुई थीं, और दिन भर मूसलाधार पानी बरसता रहा तो योगियों के आश्रम में सनका सनन्दनादि महात्मा आये। माता की तरह नारद जी भी साधू सेवा में

लगे रहा करते थे । सप्तऋषि इनकी सेवा में बहुत प्रसन्न हुए । इस विषय में नारद जी खयम इस प्रकार लिखते हैं । "उन महलाओं के सत्संग ने सुझ पर बड़ा प्रभाव डाला, मेरी आन्तरिक शक्तियां जाग उठीं । मैं बाल्यकाल से ही वेधड़क था । ऋषियों ने मेरे स्वच्छन्द भाव को पसन्द किया, सायं प्रातः जब संध्या से निवृत होते और ईश्वरोपासना में सब के सब वेद मन्त्र गाने लगते तो मैं भी अपने मन ही मन में उसी प्रकार किया करता । एक दिन मैं एकान्त में बैठा हुआ प्रगट रूप में से उसी तरह गा रहा था । जिस ऋषि ने मेरा गायन सुना वह दङ्ग रह गया, सबके सब कहने लगे यह कोई विलक्षण बालक है और मुझ को ईश्वर का सच्चा प्रेमक जान कर वेदों के द्वारा ब्रह्मज्ञान की शिक्षा दी यह मेरी विशेषता की संक्षिप्त कहानी है । ऋषियों के सत्संङ्ग से मैं कुछ का कुछ बन गया । और ऋषियों की दृष्टि में देवऋषि बन गया । सचमुच सत्संङ्ग की बड़ी महिमा है । गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं "नीच से नीच मनुष्य महात्माओं के सत्संङ्ग में आकर इस प्रकार अच्छा बन जाता है जिस प्रकार पारस के छू जाने से लोहा स्वर्ण बन जाता है । नारद को केवल सत्-सङ्ग के प्रभाव से यह पद प्राप्त हुआ था । सत्संङ्ग सुख और आनन्द देने वाली वस्तु है । सब प्रकार के उत्तम साधन उसके फल हैं। विद्या और बुद्धि की उन्नति जीवन्नो देश्य में कृत कार्यता प्रशंसा और प्रतिष्ठा जहाँ कहीं किसी को प्राप्त हुई है तो समझ लो कि उसकी जड़ में सत्संग का हाथ अवश्य रहा होगा । लोक और वेद में सत्सग का प्रभाव अवश्य वर्तमान है ।

श्री नारद जी अपने वृत्तान्त इस प्रकार सुना रहे हैं । जब ऋषियों के सत्संग से मेरे अन्तरिक चक्षु खुल गये और मैंने परमात्मा का दर्शन कर लिया तो आनन्द के मारे नाचने लगा । और दम के दम में उच्च लोक का निवासी बन गया ।।

माता को मेरे साथ बड़ा प्रेम था, मैं उसका इकलौता पुत्र था । उसने मेरी दशा देखी और समझा कि मुझ में वैराग्यभाव जाग चुका है । वह प्रसन्न हुई क्योंकि जिस माता की कोख से भक्त उत्पन्न होता है वह माता सौभाग्य समझे जाने योग्य होती है ।।

"एक दिन मैंने अपनी माताजी से कहा, माता ! यदि आज्ञा हो तो मैं बन में रह कर ईश्वर की उपासना किया करूं ? उसने कहा पुत्र ईश्वर के भजन से बढ़ कर और कोई काम नहीं है, परन्तु इस मार्ग में विघ्न बहुत आते हैं। जैसे और कामों में परीक्षा और निरीक्षण की आवश्यकता है वैसे ही इस में भी है। मेरी सम्मति में यह उचित है कि तू पहले सब देशों की यात्रा कर ताकि ईश्वर के चमत्कारों का दृश्य देखता हुआ शीघ्र उसके चरणों तक पहुंच सके। मैंने माता के चरणों में नमस्कार किया, और उसी क्षण देशाटन के विचार से चल पड़ा। माता ने कहा पुत्र ! क्या तू अपनी माता को इस वृद्धावस्था में अकेली छोड़ जायगा ! मैंने कहा नहीं माता कदापि नहीं तूभी मेरे साथ चल। और फिर उसको साथ लिये हुये, सितारा बजाता हुआ ईश्वर की महिमा सम्बन्धी गीत गाकर विचरने लगा ॥

मेरे मन राम नाम, दूसरा न कोई।
मेरे मन राम नाम, दूसरा न कोई।

पांच वर्ष यात्रा में बीते, अनेक देशों की सैर की कितने जंगल झरने और पहाड़ देखे। मुझ से वार्तालाप करने के लिये भौतिक पदार्थों को भी जिह्वा मिल जाती थी। जब वायु के झोकों से वृक्षों के पत्ते टकराते थे, तो उन के शब्दों में मुझ को मंगलगीत सुनाई देता था। संसार सचमुच एक विचित्र ग्रन्थ है, जो स्वयम परमात्मा के हाथ का लिखा हुआ है। माता ने सच कहा था जो मनुष्य इस प्रकार सीधे संसार से शिक्षा प्राप्त करना चाहता है, उस के लिये सब जगह समाधि का आनन्द उपस्थित है। और उसको वह आनन्द प्रदान किया जाता है जो और किसी उपाय से असम्भव है ॥

मार्ग में माताजी को सर्प ने डस लिया। उसने मरते समय मुझको आशीर्वाद दिया कि पुत्र तुझको ईश्वर की भक्ति प्राप्त हो। मैंने उसका मृतक संस्कार किया और कुछ काल तक फिर संसार में भ्रमण करता रहा ॥

इस देशाटन के समय में कई ऐसी घटनाऐं देखीं कि जिन से मेरी दृष्टि और उच्च हो गई और असलियत का गहरा परदा जो हर जगह व्याप्त दिखाई देता है उठता गया" ॥

एक जगह दो मनुष्य अपनी २ इच्छानुसार तप करते थे, एक उनमें से प्रतिदिन धार्मिक ग्रन्थों का पाठ किया करता था। दूसरा विवेक और विचार का साधन करता था। दोनों को अपने मोक्ष की अभिलाषा थी ॥

प्रश्न किया गया कि उन दोनों के मोक्ष पद में अभी कितना समय बाकी है। उत्तर मिला कि ग्रन्थ पाठों के मोक्ष में चार जन्म बाकी हैं यह सुन कर वह रोने और पीटने लगा कि इतना समय क्यों कर कटेगा। विवेकी मनुष्य के विषय में उत्तर मिला कि उसके मोक्ष में इतना काल बाकी है जितने कि एक इमली के वृक्ष में पत्ते होते हैं। यह सुन कर वह ऐसा हर्षित हुआ कि मारे आनन्द के नाचने और कूदने लगा और कहने लगा कि कुछ परवाह नहीं चाहे जितने जन्म धारण करने पड़े अन्त में मालिक के दर्शन मुझे प्राप्त तो होंगे ॥

नारद जी ने अपने मन में कहा इसको अब भी ईश्वर दर्शी का पद प्राप्त है ॥

एक जगह समुद्र के किनारे एक छोटी चिड़िया समुद्र के पानी को अपनी चोंच से भर २ कर बाहर फेंक रही थी। नारद जी ने उस से पूछा तू क्या रही है उसने उत्तर दिया कि समुद्र की लहरें मेरे अण्डों को बहा ले गई हैं इस लिये मैं समुद्र को जल रहित करना चाहती हूँ ॥

नारद जी हंसे परन्तु उसके साहस आवेश और दृढ़ता की सराहना की जिससे वह अगाध समुद्र को भी तुच्छ समझ रही थी। जो मनुष्य परमात्मा के प्रेम की अग्नि अपने भीतर प्रज्वलित करना चाहे उसको भी इसी प्रकार का साहसी और दृढ़ भाव वाला होना चाहिये ॥

नारद जी के जीवन में ऐसे अनेक शिक्षा दायक वृत्तान्त हजारों की संख्या में वर्तमान हैं कोई कहां तक उनका वर्णन करे ॥

नारद की भलाई के रूप थे। वैराग्य इतना प्रबल था कि जहां कहीं किसी संसारी जनों की मण्डानी में जाते थे तो वह भी इनके प्रभावाधीन हो जाते थे। लोग भय खाते थे कि अब कोई न कोई हमारा सम्बन्धी अवश्य हम से बिछुड़ जायगा ॥

कहीं पति को ज्ञान उपदेश देकर पत्नी से पृथक कर दिया, कहीं स्त्री को वैराग्य की शिक्षा देकर ईश्वर मार्ग में लगा दिया। कहीं किसी के पुत्र को धर्मोपदेश देकर बन वासी बना दिया। सच्चाई प्रेम और भक्ति के अवतार थे। इसी लिये सब इनसे चौकन्ने रहा करते थे।।

साँची बात कबीरा कहें। सब के मन से उतरे रहें ।।

दुनियां की समझ भी कुछ ऐसी उलटी है कि जो मनुष्य का असल धर्म और जीवन्नोद्देश्य है, वही दूषण समझा जाता है। नारद जी सत्यवादी थे। और इसी को दूसरे मनुष्य बुरा समझते थे। परन्तु सत्य के बिना काम चल नहीं सकता, इस लिये उसको ग्रहण करने की आवश्यकता पड़ती है ।।

दोहा--साधू ऐसा चाहिये, सांची कहे बनाय।
कै टूटे कै जूड़े, बिन कहे भ्रम न जाय ।।

अब भी लोग ऐसे सच्चे मनुष्य को जिसकी बातों से बिछोड़ा पडने का भय हो घृणा के भाव से नारद मुनि कहा करते हैं, और जिसकी थोड़ी भी कृपादृष्टि कर दी वह पूरा महात्मा हो गया ।।

एक समय का वर्णन है कि नारद का गमन एक नगर के समीप हुआ, पाँच वर्ष का छोटा सा बालक रोता हुआ चला आ रहा था। इन्होंने पूछा पुत्र तू कहाँ जा रहा है ? उसने सरलता से कहा महाराज ईश्वर के खोज में जा रहा हूं। नारद जी हंस कर कहने लगे पुत्र ! तू क्यों ईश्वर को खोजने चला है ?

उसने रोकर कहा "मैं राजा उत्तानपाद का पुत्र हूं मेरी दो मालाऐं हैं। सुनीति और सुरुचि। सुरुखि छोटी है मैं सुनीति का पुत्र हूं। उत्तम मेरा छोटा भाई सुरुचि का पुत्र है। आज सवेरे उत्तम पिता की गोद में बैठा था, मैं भी जाकर बैठ गया। सुरुचि माता ने झपट कर मुझको राजा की गोद से उतार दिया, और कहने लगी यदि तू मेरी कोख से उत्पन्न हुआ होता तो नि; संदेह राजा की गोद में बैठ सकता था। मुझको दुःख हुआ, मैं रोता हुआ सुनीति माता के पास गया, जब उसने मेरी सब बातें सुन लीं तो मेरे आंसू पोछ कर कहने लगी पुत्र तू इस निरादार के स्थान में मत रह जहां रोज २

निरादार होता रहता है। तू जाकर ईश्वर को गोद की खोज कर वह अनाथों नाथ और दीनदुखियों का पिता है। वह छोटे बच्चों से प्रेम करता है। माता की आज्ञा अनुसार मैं उसे खोजने जाता हूँ। उसी की गोद में रह कर मुझ को आनन्द मिलेगा। यदि आप जानते हैं तो मुझको उसका पता बता दीजिये॥

भोला बच्चा भोली २ बातें नारद के नेत्रों से प्रेम के आंसू बह निकले और तत्काल परमात्मा से प्रार्थना की "हे ईश्वर ऐसा बाल्य स्वभाव और ऐसी सरलता तू मुझको भी प्रदान कर॥

बालक जिज्ञासू था, सच्चा था, अधिकारी था, साधू अधिकारी को पाकर मौन नहीं रहते। गोस्वामी तुलसीदास जी रामायण में एक जगह कहते हैं :—

चौपाई

गूढ़हु न साधु दुरावहिं। आरत अधिकारी जंह पावहिं॥

नारद ने लड़के को अपनी उंली पकड़ा दी और धैर्य देने वाली बातें करते हुए अपने साथ बन में लाये, वहाँ उसको धर्म का उद्देश्य देकर और और सब प्रकार कायत्र सिखाला और फिर आप आगे गए। थोड़े ही का में यह लड़का तपस्या करके पूरा सिह हो गया। और उसकी इतनी महिमा फैली कि राजा उत्तानपात स्वयम अपनी स्त्रियों समेत उससे क्षमा प्रार्थना करने आया और राजगद्दी का मालिक कर दिया। इस लड़के का नाम इतिहासिक जगत में ध्रुव है। जिसकी प्रशंसा और कीर्ति का तारा आज भी चमक रहा है। यह श्री नारदजी के उपदेश का प्रभाव था। नारदजी का वचन कभी मिथ्या नहीं होता था, क्यों कि सच्ची कमाई वाले थे। एक बार आप हिमाचल नामक राजा के घर पर गये। वह अपनी छोटी पुत्री पार्वती जी की साथ लिये हुए इनके चरणों में गिरा, पार्वती जी अति रूपवान् और भोली भाली कन्या थी पिता ने नारद जी से पूछा महाराज! इसके योग्य कोई वर बताइये। नारदजी ने उसे ध्यान पूर्वक देख कर उत्तर दिया "शिवजी स सिवाय और कोई इसके योग्य वर नहीं हो सकता नारद जी तो इतना कह कर चले गए। हिमाचल ने इस बात को कुछ स्मरण नहीं रक्खा। परन्तु

पार्वती जी ने इस बात को दृढ़ रूप से स्मरण रक्खा और उसी क्षण से शिव की प्राप्ति के लिये तप करने लगीं। माता पिता, ऋषि मुनि सब ने समझाया कि शिव का विचार छोड़ दो। परन्तु उन्होंने सबको जो उत्तर दिया वह प्रत्येक सत्य के अभिलाषी को अपने हृदय में धारण कर रखना चाहिये। सुतराम वह कहती है :—

चौपाई

जन्म कोटि लग रगड़ हमारी। वरूं शम्भू नहिं रहूं कुमारी ॥
तजूं न नारद कर उपदेशू। आप कहें सतबार महेशू ॥
अब मैं जन्म शम्भु हित हारा। को गुण दोषहिं करै विचारा ॥
नारद वचन न मैं परिहरऊं। बसो भवन उजरै नहिं डरऊं।
गुरु के वचन प्रीति नहिं जोही। स्वप्ने सुगम न सुख सिहि तेहीं ॥

भावार्थ—करोड़ों जन्म तक में इस प्रतिज्ञा पर स्थिर रहूँगी, या तो शिव के साथ विवाह होगा वा मैं कुमारी रहूंगी। मैं नारद के उपदेश को कभी परित्याग नहीं करूंगी। यदि शिवजी आप आकर मुझे इस बात में वर्जित करें तो भी मैं नही मानूंगी। मैंने अपना यह जन्म शिवजी के अर्थ अर्पण कर दिया है मुझ को गुण दोष विचारने का अवकाश नहीं है। मैं नारद जी के वचनों को कभी विस्मरण नहीं करूंगी। चाहे घर बसे अथवा उजड़े मैं इसकी परवाह नहीं करती। जिस को गुरु के वचन में विश्वास और प्रीति नहीं है उसको स्वप्न में भी सुख और कृतकार्यता प्राप्त नहीं होती" ॥

वाह! कैसे उत्तम वचन हैं। कैसा दृढ़ विश्वास है। यह नारद जी के उपदेश का प्रभाव था ।।

नारद जी के शिष्यों की संख्या साठ हजार बताई जाती है। और जब हम देखते हैं कि बुधदेवजी के एक २ मठ में सैंतीस २ हजार शिष्य रहते थे तो हमको इस संख्या पर कोई आश्चर्य नहीं होता। इन शिष्यों में ध्रुवादि की तरह बहुत से राजे महाराजे भी थे ।।

श्री नारदजी के उपदेश का ढँग भी निराला था। कहते हैं कि चित्र गुप्त के पुत्रों को किसी कारण से शोक था, नारद अकस्मात वहाँ पहुंचे और उनसे

पूछा तुम क्यों रोते हो ? यदि कोई वस्तु छिन गई है तो जाने दो इस संसार में सब कुछ प्रकृति का सामान है। यह प्रकृति हर समय बदलती रहती है। बदलना ही इसरे शब्दों में मृत्यु का नाम है। और जब मृत्यु का क्षण प्रतिक्षण सामना रहता है तो फिर शोक कैसा और चिन्ता कैसी। तुम पहले लड़के थे अब युवा हो, लड़के की अवस्था से युवावस्था में आना बाल्यकाल की अवस्था की मृत्यु होना है। क्योंकि अब वह शरीर नहीं रहा। दूसरा शरीर तुमको मिला है। शरीर के परमाणु बदल गए। जब बुढ़ापा आवेगा तो जवानी का शरीर भीजाता रहेगा। देखो इसी जन्म में तुम कितनी बार बदले। मृत्यु भी चोला बदलने का ही नाम है। यदि कोई मर गया है तो भी क्या चिन्ता है। पैदा होने वाले के लिये मरना आवश्यक है। क्या तुम बता सकते हो कि कोई उत्पन्न हुआ मनुष्य अजर अमर है ? जब प्रकृति के परमाणु एकत्र होगए॥

तो एक रूप बन गया, जब परमाणु बिखर गए तो रूप और नाम भी जाते रहे। जब तक तुम बदलने वाली प्रकृति पर ध्यान रक्खोगे तब तक भ्रम और भ्रान्ति रहेगी। आत्मा की ओर ध्यान रक्खो तुरन्त शान्ति प्राप्त होगी।

नारद के विषय में यह भी प्रसिद्ध है कि वह बड़े हंसमुख थे। हंसने का स्वभाव उन में कूट २ कर भरा हुआ था। और कदाचित इसी हंसने के स्वभाव ने उनको बदनाम किया हो॥

नारदजी ग्रन्थकार भी हैं उनकी पुस्तकों का पौराणों में भी वर्णन आता है। परन्तु अब वह हस्तगत नहीं होती। सब से अधिक प्रसिद्ध पुस्तक नारद पञ्चदत्रि है। इस में ज्ञान के विषय में उपदेश हैं। दूसरी पुस्तक भक्ति सूत्र जो अब भी बड़े प्रेम से पढ़ी जाती है। इसके अतिरिक्त नारद स्मृति भी एक पुस्तक है। और कहा जाता है कि भूगोल गानविद्या कला कौशलादि के विषय में भी उन्होंने अनेक ग्रन्थ रचे थे। परन्तु अब उनका कहीं पता नहीं चलता। नारद के नाम पर एक पौराण भी लिखा गया है, जो नारद पौराण कहलाता है॥

कहते हैं कि श्री व्यास ऋषिजी को जो वेदान्त विद्या का ज्ञान प्राप्त हुआ था वह भी नारद जी की कृपा से हुआ था। चाहे कुछ ही उनके नाम की

प्रसिद्धता इस बात की प्रमाण है कि नारद संसार में बड़े महान् और अद्वितीय हो गुजरे हैं। और जब तक एक हिन्दू बच्चा भी संसार में जीवित है तब तक उनका नाम इसी प्रतिष्ठा के साथ लिया जायेगा ।।

महाराजा वीर विक्रमादित्य

अफलातून हकीम अपनी रिपबलिक नामी पुस्तक में इस प्रकार लिखता लिखता है कि जब तक बादशाह तत्ववेता न हों, जब तक इस संसार के क्षत्र पतियों की विद्वता और ऐश्वर्य मिले जुले न हों तब तक न तो नगरों से खराबियां दूर होंगी और न मनुष्य जाति सुधार होगा। केवल इतना ही नहीं वरन् आगे चल कर वह इस प्रकार लिखता है "सच्ची बात तो यह है, कि जिस देश के महिपाल में राज्य मद वा लोभ नहीं होता वह उसका प्रबन्ध अति उत्तम होता है। और जो देशाधिपति लोभी तथा अभिमानी होते हैं, उनके प्रबन्ध निकृष्ट होते है"। यह एक ऐसे बुद्धिमान का वचन है कि जिस के नाम की दुनियां अब तक प्रतिष्ठा करती है। और इस में सन्देह भी नहीं है कि उसका विचार बहुत कुछ सत्य है। इस आर्य्यवर्त के इतिहास में एक ऐसा समय बीता है कि जब यहां के राजे महाराजे राज कार्य के काम को अपना धर्म समझ कर करते थे। उनको यह लोभ नहीं रहता था कि हम राजा बनाए जाँय वरन् वह सत्य को समजते हुए इस भार को अपने सिर पर उठाते थे। और इस प्रकार के देशाधिपति गद्दी पर बैठते हैं तो देश में सब प्रकार का सुख और आनन्द छा जाता है प्रजा को दुःख नहीं रहता। सब से उत्तम दृष्टान्त रामचन्द्र जी का है। उनको किंचितमात्र भी राज का लोभ नहीं था। जिस समय यह ज्ञात हुआ कि राज भरत को मिलने वाला है तो बड़े हर्ष के साथ बन को सिधार गए। लौटने पर जब भरत ने बड़ी आग्रह के साथ भेंट किया तो उन्होंने स्वीकार कर लिया। एक अवसर पर आप कहते हैं। हे भरत ! मैं राज अपनी इच्छा से नहीं करता वरन् तुम्हारी इच्छा से करता हूं। और रामायण का रचियता कहता है कि राम का राज आदर्श राज्य था। राम अपनी प्रजा के पिता थे। छोटे २ बच्चा तक उनको उसी

दृष्टि से देखते थे। प्रजा के सुख की यह दशा थी कि राम राज्य में कभी दुर्भिक्ष नहीं पड़ा, न किसी शत्रु को आक्रमण करने का साहस हुआ। देश में सब प्रकार से सुख और शान्ति थी। कहने वाले तो यहाँ तक कहते हैं कि उन के समय में कभी भी युवा पुत्र माता पिता के सन्मुख नहीं मरे। देश महामारी से सुरक्षित था। राम राज्य सचमुच आदर्श राज्य था। और इसका कारण इसके सिवाय और कुछ नहीं कि राम धार्मिक और तत्ववेता थे। उन में राज्य से अधिक धर्म का प्यार था। धर्म के नाम पर वह सब कुछ अर्पण करने को तैयार रहते थे। यहाँ तक कि धर्म के लिये उन्होंने स्वेच्छा से कितने कष्ट सहन कर सकते थे इसी लिए उनको मर्य्यादा पुरुषोत्तम कहते थे। जब २ इस देश में इस प्रकार के देशाधिपति हुए हैं तब २ आर्यवर्त स्वर्ग धाम बन गया था ।।

राम तो अद्वितीय थे ही परन्तु इस देश में और भी ऐसे देशाधिपति हुए हैं कि जो उनके पद चिन्ह पर चलने का उद्योग करते थे। उनकी संख्या बहुत है। दो हजार बीते कि इसी प्रकार का एक राजा जिसने अपने समय में राम के गुणों का स्मरण कराना चाहा था महाराजा वीर विक्रमादित्य था। जो उज्जैन नगरी देश का राजा हुआ है ।।

वीर विक्रमादित्य के पिता का नाम गन्धर्वसेन था। जो परमार वंश से था। यह परमार वंश क्या वस्तु है ? इसका भी कुछ हाल बता देना आवश्यक है। जब इस देश में धर्म की हानि होने लगी तो धर्म रक्षा के निमित्त उस समय के ऋषि आबू नामक पर्व पर परस्पर चिरकाल तक विचार करते रहे और वहाँ हीं कई प्रकार के क्षत्री कुल उत्पन्न करने का यत्न निकाला। पंरमार, चौहान, सुलङ्की, परिहार यह सब अग्नि कुल क्षत्रिय थे। इनका सम्बन्ध प्राचीन क्षत्रियों से नहीं हैं। इस संस्कार किये हुए क्षत्रियों में गजब का आवेश था : यह अपने काल के बड़े धर्म रक्षक प्रमाणित हुए हैं। विक्रमादित्य का पिता इसी अग्नि कुल वंश का क्षत्रिय था। विक्रमादित्य के कई भाई थे, उनमें से भर्तृहरि सब से बड़ा था गन्धर्वसेन की मृत्यु के पश्चात् वहीं गद्दी पर बैठा। वह अपने समय का बड़ा ज्ञानी पण्डित हुआ। उसके नाम की

भर्तृशतक नामक पुस्तक अब तक वर्तमान है। उसने विक्रमादित्य को अपना मन्त्री बनाया, क्योंकि इसकी शिक्षा बहुत अच्छी हुई पंडित्य और वीरता दोनों बातों में अद्वितीय था। राज्य नीति है इसकी समझ ऐसी अच्छी थी कि विना उसकी सम्मति लिए हुए भर्तृ कोई काम नही करता था। सहानुभूति का भाव इसमें कूट २ कर भरा था। इसी लिये "दुःख भञ्जन की पदवी इसे प्रदान की गई थी। चोर उच्चके उसका नाम सुन कर कांपते थे। भर्तृ हरि यद्यपि बड़ा पंडित था तथापि पिंगला नामक रानी के प्रेम में आशक्त था। पिंगला रूपवती अवश्य थी परन्तु हृदय की मलीन थी। एक दिन विक्रम की दृष्टि उसकी किसी दुष्क्रया पर पड़ गई। उस दिन से पिंगला उससे डरने लगी और भर्तरी के कान भरने आरम्भ किये। जब भर्तरी सुनते २ दिक हो गया तो एक दिन विक्रम को बुला कर कहा, तुम बड़े बुद्धिवान हो एक बात में मेरी सहायता करो। विक्रमादित्य ताड़ गया कि राजा क्या कहने वाला है तथापि मन रोक कर कहा। "महाराज आज्ञा करें मुझ में जितनी सामर्थ है उसके पालन करने में कोताही न करूंगा। भर्तरी ने कहा यदि किसी राजा का छोटा भाई नीति के विरुद्ध कार्य करे और प्रजा के आचार में विघ्न पड़े तो क्या करना चाहिये ? विक्रम ने हाथ बांध कर कहा महाराज ऐसे मनुष्य को या तो बध करना चाहिये वा देश से अच्युत करना चहिये, परन्तु अपराध के विषय में पूरी २ छान बीन कर लेनी चाहिये। इस पर भर्तरी ने कहा तुम्हारे सम्बन्ध में ऐसी सूचनायें मुझे मिली हैं कि तुम दुराचारी हो इस लिये जो दण्ड तुमने अपने सुख से कहे है उन्हें ग्रहण करो। विक्रम बोला हैं सर्वथा निरपराध हूँ। पहले आप अनुसन्धान करलें। ऐसा न हो कि पीछे से आप को पश्चाताप करना पड़े। भर्तरी पर रानी का जादू चल चुका था वह क्रोध से भर गया था, कहने लगा 'तुम झूठे हो। जाओ अभी देश को त्याग दो"। विक्रमादित्य ने फिर कोई उत्तर देना उचित नहीं समझा। भाई को नमस्कार किया और केवल इतना कहा "राजन् आप की जय हो। आपकी आज्ञा शिर और आँखों पर किन्तु आपने अनुसन्धान नहीं किया अन्त में आपको पश्चताप अवश्य होगा ॥

इतना कह कर वह एक ओर को चल दिया। और फिर चिरकाल तक उसका कुछ पता नहीं मिला। विक्रम के चले जाने से नगर में उदासी छा गई। सेना के सिपाही उत्साह हीन हो गये। मन्त्रियों के मन में तरह २ की शंकाऐं होने लगीं, क्योंकि विक्रम बास्तव में बड़ा धर्मवान और सर्व प्रिय था।

विक्रम के चले जाने के पश्चात भर्तरी को भी बड़ा दुःख हुआ। उस पर पिंगला की दुष्टता विदित हो गई। एक दिन जब वह राज महल से निकला तो उसके मुख से यह शब्द उच्चारण हुए :—

"अहो स्त्रीणां चित्त चरित्रंकेनापि विज्ञायत"।

अर्थात्—शोक ! स्त्री के चित्त के चरित्र को कोई भी नहीं जान सकता। फिर दरबार में आकर मंत्रियों ने पूछा कि महाराज आपका क्या हाल है उत्तर दिया :—

"न वैराग्यात्परं भाग्यं बोधाद परः सखा। न हरे इमस्त्राता न संसारात्परो रिपुः ।। भवार्थ—वैराग्य से बढ़कर और कोई सौभाग्य नहीं है। ज्ञान बढ़कर कोई राय नहीं है। भगवान् से बढ़कर कोई किसी का सहायक नहीं है। और संसार से बढ़कर कोई किसी का शत्रु नहीं है। यह कहता हुआ वह जंगल की ओर चला गया और अनेक स्थानों में रहकर ईश्वर उपासना में अपनी आयु व्यतीत की ।।

विक्रम के चले जाने पर ही उज्जेन नगरी उदास हो गई थी जब भर्तरी चला गया तो वह और भी उजाड़ होगई। बैताल नामक एक मनुष्य ने उस पर अधिकार कर लिया और सबको जो दुःख हुआ यह अवर्णनीय है। प्राचीन मंत्रियों ने विक्रम की खोज में आदमी भेजे। किसी जगह तपस्या कर रहा था, जब उसने अपने नगर वासियों का दुःख सुना तो उससे ना रहा गया। वह विवश होकर उज्जेन में आया और आते ही बैताल से मल्ल युद्ध हुआ। विक्रम ने उसे पछाड़ दिया। बैताल उसकी आधीनताई स्वीकार करली। तब वह उसको साथ लिये हुए राज दरबार में आया आके उसी क्षण से नगर में आनन्द बधाई बजने लगी। बड़ी धूम धाम से राज तिलक किया गया ।।

जब उज्जेन में हर तरह से शान्ति हो गई तो विक्रम ने अपने राज को

बढ़ाना आरम्भ किया। उड़ीसा, बंगाल, कच्छ, गुजरातादि को अपने राज्य में मिला लिया। परन्तु उनके राजाओं को किसी प्रकार का दुःख नहीं दिया। इसके पश्चात शकादित्य नामी दिल्ली के राजा को अपके अधीन किया। यह सन् ईसा के ५६ वर्ष पहले की है और उसी साल से उसने अपना सम्वत् प्रचलित किया। जो अब तक भारतवर्ष के सम्पूर्ण विभागों में प्रचलित है। विक्रमादित्य उस समय में आर्य दुनियां के सब राज्यों से अधिक बलवान समझा जाता था ।।

विक्रमादित्य को शक्तिशाली होने में कोई सन्देह नहीं है। राज कार्य के अतिरिक्त इसका बहुत कुछ समय परमार्थ के कामों में खर्च होता था। दरवार में हर तरह के विद्वान जमा रहते थे। विद्या बुद्धि का ऐसा आदर करता था कि सब देशों के मनुष्य इसके दरबार में जमा रहते थे। संस्कृत की बहुत सी पुस्तकें इसके समय में रची गईं। जीवोत्र-विद्यामरण नामक पुस्तक में लिखा है कि विक्रमादित्य की राज सभा में आठ सौ मण्डलीक राजे, सोलह व्याख्यान-वांचस्पति, दश ज्योतिषी, छैः वेद्य सभा के नव रत्न आज तक प्रसिद्ध हैं। इनके नाम यह हैं धन्वन्तरी, शपनिक, अमरसिंह, शंकु, बैताल-भट्, षटकपर, कालीदास. वाराह मेहर, और विवची। धन्वन्तरी वैद्य था, अमरसिंह लेखक था। उसका कोष आज तक प्रचलि है। अमरसिंह जैनी था। कहते हैं कि जब स्वामी शंकराचार्य जी जैनियों की पुस्तकों को जलमग्न करने चले तो उन पुस्तकों में अमरकोश भी था। अन्य पंडितों ने उसकी रचना प्रणाली पर मोहित करके हठ पूर्वक इसे बचा लिया। अंग्रेजी में उसी प्रकार की एक किताब बनी है। परन्तु वह अमरकोश की गर्द को भी नहीं पहुंचती वराह-मेहर ज्योतिषी था। कालीदास कवि था, जिसकी शकुन्तला नाटक नामी पुस्तक अब तक दुनियां को अचम्भे में डालती है। पश्चिमी विद्वान् इसकी भारतवर्ष का शेषका पियर कहते हैं। इस महाराजा के समय में ऐसे २ अद्वितीय पुरुष उत्पन्न हुए कि जो सचमुच अनुपमेय थे ।।

कहते हैं इसके पास देश, धन और धरती बहुत थी। सेना इतनी अधिक

थी कि अठारह योजन में डेरा पड़ता था, तीन करोड़ पैदल. दस करोड़ सवार चौंतीस हजार तीन सौ हाथी, और चार लाख मल्लाह थे। इस ५४ शाका सरदारों को परास्त किया था ॥

वेदों का ज्ञाता था, शास्त्रों का सम्मान करता था। देश में सर्व पाठ-शाले खोल रक्खे थे। उसके राज्य में किसी पर जुल्म व अत्याचार नहीं होने पाता था। सिंह और बकरी एक घाट पानी पीते थे। विवाद मिटाने के लिए न्यायाधीश नियत थे राजा स्वयं भेष बदल कर शहरों में घूम फिर कर प्रजा की असल अवस्था को जाना करता था। सब के सब धर्म पर चलते थे। अनाथों की रक्षा का प्रबन्ध था. विक्रमादित्य शिवजी का उपासक था, जगह २ पर शिव मन्दिर बनवाए हुए थे! उज्जैन में महाकाल का मन्दिर उसी का बनवाया हुआ है। बनारस के लोग अब तक कहते हैं कि शिवनाथ का मन्दिर उसी का बनवाया हुआ हैं परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं है ॥

यह राजा परिश्रमी भी बहुत बड़ा था, जब कभी भेष बदल कर निक-लता था तो महीनों दुःख उठाकर प्रजा का उपकार किया करता था। राजाओं का महाराजा होते हुए भी यह चटाई पर सोता था और अपने पीने लिए स्वयं छिप्रा नदी से जल भरलाया करता था। यदि इस सहिष्णुता का मनुष्य सारी दुनियां को जीत ले तो इसमें सन्देह क्या है। विक्रमादित्य की प्रतिष्ठा केवल भारतवर्ष तक ही नहीं थी वरन् सपूर्ण पृथवी के राजे उसका आदर करते थे। विविध देशों के महिपालों के दरवारों में उसके प्रतिनिधि रहा करते थे। एक प्रतिनिधि रूम के आगसूस सौरज प्रथम बादशाह के दर-बार में रहा करता था। यह प्रबन्ध व्यापार की सुगमता के लिये था ॥

यह आर्य्यवर्तका अन्तिम महाराजा था, जो प्राचीन आर्य महाराजाओं के पदचिन्ह पर चलने वाला था। यह बड़ा तत्त्व वेता भी हुआ है। इसका जीवन शास्त्र के अनुसार था ॥

फकीर चमन पत्रावली

हुशियारपुर
२१-६-७३

26. चमन साहिब, राधा स्वामी,

तुम्हारा नाम चमन हैं। चमन की तरह खिले रहो ! खुश रहो !! जिन्दगी खुशी से गुजारो और काम करो। **Life means work and work means life.**

फकीर

हुशियारपुर
३०-६-७३

27. चमन जी राधा स्वामी

खुश रहो ! गुरू और चेला इस संसार के व्योहार है। जब सचाई का पता लग जाता है और अगम देश का वासी हो जाता है तो फिर गुरु और न चेला। मगर इस अवस्था में आकर उपदेश का काम नहीं कर सकता। मनुष्य के अन्दर एक भावना है जो सहानुभूति न एहसान मानता है हिन्दुओं में देखो न वर की पूजा, सास की पूजा, गुरु की पूजा और त्यौहार आदि क्या हैं ? इन से कृतज्ञता का अनुभव होता है, मर्यादा को स्थिर रखने के लिए मैंने तुम को लिखा था अथवा ६ पैसे की बचत का ध्यान नहीं था।

—आपका फकीर

नोट-हजूर ने मुझे लिखा था कि तुम प्रश्न पूछते हो किन्तु जवाबी कार्ड नहीं भेजते। यह ठीक नहीं। मैंने उत्तर दिया था कि महाराज मैं तो आपको मालिक का रूप समझता हूँ अतः मन में कभी पैसे की भावना नहीं आई। जब मन में विचार ही नहीं आया तो फिर यह बात कैसे हुई। उसका उत्तर हजूर ने ऊपर लिखित दिया।

हुशियारपुर
९–७–७३

28. चमन जी राधा स्वामी

चमन हो तो खिलते रहा करो। जिस भान्ति चमन में फूल खिलते हैं, फल लगते हैं और लोगों को ठण्डक और खुशी देते रहते हैं इसी भान्ति दुनिया में तुम भी लोगों को सुख देते रहा करो! मेरी ओर से केवल शुभ भावनाएं हैं या अनुभव है जो मैंने जीवन की दौड़-धूप से प्राप्त किया है। तुम भर्म में थे। मेरे पास आए। तुम्हारे भर्म चले गये। तुम्हारी बात समझ में आ गई। अब जीवन को खुशी से गुजारो।

—आपका फ़कीर
हुशियारपुर
१३–७–७३

29. प्यारे चमन राधा स्वामी

जब तक जीवन है कर्म भोग का साथ हैं। जिन्दगी गुजरती है **adjust** करते रहा करो। मालिक का भरोसा रखो। आप तो ज्योतिषी हैं और यह जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को उस के कर्म का भोग भोगना ही पड़ता है।

आपका फ़कीर
हुशियारपुर
११–९–७३

30. चमन साहिब राधा स्वामी

पत्र मिला। मालिक की आप पर दया रहेगी काम करते चलो। रुपया मिल जाने पर मन्दिर आप को रसीद भेज देगा। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है।

आपका फ़कीर
१८–१०–७३

हुशियारपुर
१८-१०-७३

31. चमन जी राधा स्वामी

पत्र मिला। आप के सुक्षात्रों का ध्यान रखा जावेगा। बाकी रह गया सत्संग करना या शिक्षा को फैलाना यह सब अपने मन को प्रसन्न करना है। मेरा जीवन बीत गया। कितने आदमी सीधे मार्ग पर आए और कितने सुलझे। अनुभव बताता है कि सन्त मत किसी को पार नहीं करता उस आदमी की नीयत उस की सच्ची लग्न और सच्ची तड़प उस का बेड़ा पार करती हैं।

आपका फ़कीर

कबीर शब्द व्याख्या

दुर्गा दास "चमन"

सुरति से देखिले वहि देस !
देखत देखत दीसन लागे, मिटिगे सकल ग्राँदेस।
वहँ नहीं चन्दे वहाँ नहि सूरज, नाहि पवन परवेस।
वहँ नहीं जाप वहाँ नहीं आजपा, नि:अच्छर परबेम।
वहँ के गये बहुरि नहि आए, नहि कोउ कहा सन्देस।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, गहु सतगुरु उपदेस ॥

प्रिय, सत्गुरु स्वरूप मित्रो,

कबीर साहिब का यह शब्द अन्तिम अवस्था की ओर संकेत देता है। कबीर जी आदि सन्त हुए। उनकी अपनी ही वाणी के अनुकूल वह चारों युगों के जीवों को चिताने के लिए आए हैं। इन्होंने ऊपर से लेकर नीचे के सब केन्द्रों का पूरा वर्णन किया है, यह अधिक जोर ऊपर की अवस्था पर देते हैं, जिसे सन्त अशब्द गति कह कर पुकारते हैं। जब तक मनुष्य इस गति को प्राप्त नहीं करेगा सहज भाव आ नहीं सकता। सुरत शब्द योग या दूसरे दूसरे समस्त योग इस दशा को लाने में सहायक होते हैं। विश्व में किसी भी वस्तु

शेष गतांक से आगे

॥ मनुष्य बनो ।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार आपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ । उत्तर प्रदेश
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर अलीगढ़
५—सम्पादक का नाम		श्री श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता		भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ अक्टबर, १९७८

सुधा मीतल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. No. L-ALG-28

पुस्तकें

हमारे यहां

महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज

कृत

हिन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक, स्त्री उपयोगी, स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती' सिलसिले के उपन्यास तथा परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें मिलती हैं।

पूरा सूचीपत्र मंगायें।

डाक खर्च सब का अलग है।

पुस्तक रजिस्टर्ड डाक या रेल से भेजी जाती हैं।

मिलने का पता—

कार्यालय

मनुष्य बनो

शिव भवन, लेखराजनगर,
अलीगढ़ (उ० प्र०)

ग्राहक सं० 980

श्री Yampally Sunder Rao
V. Jangi (K)
P.O. Tadkal
Distt - MEDAK

मुद्रक — मुद्राचन्द्र मीतल

व्यवस्थापक व प्रकाशक—
श्रीमती सुधा मीतल,
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़।

Printed by S. Mittal. Data Dayal Printers, Aligarh